जनसत्ता

3 दिसंबर, 2019

# खर्चीला संचार

संचार कंपनियां जिस तरह कुछ समय से अपने घाटे का ब्योरा दे रही थीं, उसी से जाहिर हो गया था कि मोबाइल फोन सेवाओं के शुल्क बढ़ सकते हैं। आखिरकार सभी बड़े नेटवर्क वाली कंपनियों ने अपने शुल्क में चालीस से पचास फीसद तक बढ़ोतरी की घोषणा कर दी। वोडाफोन, एअरटेल, जियो और आइडिया ने अलग-अलग बयान जारी कर अपने बढ़े हुए शुल्कों की जानकारी दी। पिछले करीब चार सालों में यह पहली बढ़ोतरी है। अब उपभोक्ताओं को न सिर्फ मुफ्त बातचीत के लिए मिलने वाले असीमित समय और प्रतिदिन मिलने वाले इंटरनेट डाटा का लाभ मिलना कम हो जाएगा, बल्कि उन्हें नियमित शुल्क भी बढ़ी दर पर चुकाना पड़ेगा। यानी अब तक जो लोग सौ रुपए खर्च किया करते थे, उन्हें नई शुल्क दर के अनुसार करीब डेढ़ सौ रुपए खर्च करने पड़ेंगे। इस पर स्वाभाविक ही कुछ लोगों को हैरानी हो रही है कि ये कंपनियां जब पिछले चार सालों से मुफ्त या सस्ती सेवाएं उपलब्ध करा रही थीं, तो अचानक ऐसा क्या हुआ कि वे घाटा उठाने लगीं और उन्हें शुल्क की दरें बढ़ानी पड़ीं! हैरानी इस पर भी स्वाभाविक है कि मोबाइल कंपनियों की इस घोषणा पर दूरसंचार नियामक अधिकरण यानी ट्राई ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी है।

दूरसंचार के क्षेत्र में निजी कंपनियों को इसलिए कारोबार का मौका दिया गया था कि इससे संचार के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी और इसके फलस्वरूप संचार शुल्क घटेगा। इसके सकारात्मक नतीजे भी आए। संचार सेवाओं के शुल्क काफी कम हो गए। मोबाइल सेवाओं की पहुंच सामान्य आयवर्ग तक भी संभव हो सकी। स्मार्टफोनों का चलन बढ़ा और इंटरनेट सेवाओं का तेजी से विस्तार हुआ। सेवा क्षेत्र में जितनी तेजी से दूरसंचार का विस्तार हुआ, उतना किसी अन्य क्षेत्र में नहीं हुआ। इसी दौर में जियो ने असीमित मुफ्त बातचीत और इंटरनेट सेवाएं देने की लंबे समय तक योजनाएं चलाईं। उसका नतीजा यह हुआ कि जिन लोगों के पास फोन सेवाएं नहीं पहुंची थीं, वे भी इसका लाभ उठाने लगे। आंकड़े बताते हैं कि संचार सेवाओं के मामले में भारत सबसे तेजी से उभरता देश हो गया। अब बहुत कम परिवार ऐसे हैं, जिनके पास मोबाइल सेवाओं की पहुंच नहीं है। यानी उपभोक्ताओं की संख्या निरंतर बढ़ी है। फिर दूरसंचार कंपनियों को घाटा कैसे उठाना पड़ रहा था!

इसकी कुछ वजहें समझी जा सकती हैं। एक तो यह कि निजी दूरसंचार कंपनियों ने प्रतिस्पर्धा के चलते बहुत तेजी से अपनी सेवाओं के विस्तार पर जोर दिया। उसमें सस्ती दर पर अधिक सेवाएं उपलब्ध कराने की योजनाएं भी चलाईं। इस तरह उनका खर्च बढ़ता रहा और कमाई अपेक्षित रूप से कम हुई। फिर बाजार में मंदी, महंगाई बढ़ने और लोगों की कमाई घटने की वजह से बहुत सारे लोगों ने अपने खर्चों पर अंकुश लगाना शुरू कर दिया। इसका असर दूरसंचार कंपनियों के कारोबार पर भी स्वाभाविक रूप से पड़ा। महंगाई बढ़ती है तो सेवाएं भी महंगी होती हैं। पर जिस क्षेत्र में उपभोक्ता निरंतर बढ़ रहे हैं, जिस पर तमाम कारोबारी और सामाजिक गतिविधियों की निर्भरता बढ़ती जा रही है, उसमें लाभ कम रहने का तर्क खटकता ही है। सरकारी संचार सेवाओं की हालत बहुत खराब है, जिसकी वजह से अधिसंख्य लोग निजी संचार सेवाओं की तरफ मुड़ चुके हैं। ऐसे में कमजोर आर्थिक स्थिति वाले, जैसे ग्रामीण क्षेत्रों में मोबाइल सेवाओं का लाभ लेने वाले, तेजी से घटेंगे। तब इन कंपनियों के लिए अपना घाटा पाटना और मुश्किल हो सकता है।

# स्त्री का भय

इससे बड़ी विडंबना और क्या होगी कि हमारे देश में विकास के नारे के बीच बड़ी तादाद में महिलाएं खुद को, अमूमन हर जगह, असुरक्षित महसूस करती हैं। वे शायद ही कोई ऐसी जगह पाती हैं, जहां इस बात को लेकर आश्वस्त हों कि उनके खिलाफ कोई आपराधिक घटना नहीं होगी। खासतौर पर वे यौन हिंसा की प्रकृति की घटनाओं के खौफ से लगातार खुद को घिरी पाती हैं। यों यह एक आम और त्रासद हकीकत है, जिस पर कोई भी संवेदनशील व्यक्ति गौर कर सकता है, लेकिन अक्सर इस सामाजिक पहलू पर होने वाले अध्ययनों की रिपोर्टों में यही तथ्य उभर कर सामने आता है। इसी क्रम में सामाजिक उद्यम 'सेफ्टीपिन', सरकारी संगठन कोरिया इंटरनेशनल कॉरपोरेशन एजेंसी और एक स्वयंसेवी संगठन एशिया फाउंडेशन के संयुक्त अध्ययन में एक बार फिर यही विडंबना दर्ज हुई है कि देश के कई शहरों में महिलाएं लगातार खुद को भयग्रस्त पाती हैं। रिपोर्ट के मुताबिक भोपाल, ग्वालियर और जोधपुर में करीब नब्बे फीसद महिलाएं सुनसान और खाली इलाकों की वजह से खुद को असुरक्षित महसूस करती हैं। खासकर अविवाहित महिलाओं और छात्राओं को यौन हिंसा का खतरा ज्यादा है।

हालत यह है कि करीब दो तिहाई महिलाएं सार्वजनिक परिवहन की खाली या कम लोगों को ले जाती गाड़ियों में सफर करने से डरती हैं या सुरक्षा इंतजामों की कमी की वजह से वे लगातार एक आशंका से घिरी रहती हैं। लगभग छियासी फीसद महिलाएं आसपास शराब या दूसरे नशीले पदार्थों की बिक्री से असुरक्षित महसूस करती हैं। आखिरकार ये कमियां किसकी लापरवाही से मौजूद हैं? विचित्र है कि महिलाओं को घूरने, पीछा करने, फब्तियां कसने और गलत तरीके से छूने जैसी घटनाओं में बढ़ोतरी हुई है, लेकिन इन्हें यौन उत्पीड़न के मामलों में गंभीर प्रकृति का नहीं माना जाता है। जबकि शुरुआती तौर पर घटने वाली ऐसी ही घटनाओं की अनदेखी और उनसे निपटने में बरती जाने वाली लापरवाही के बाद अपराधी प्रवृत्ति वालों का मनोबल बढ़ता है। यह बलात्कार या यौन हिंसा की बड़ी वजह है। इसके अलावा, घर की दहलीज से बाहर घटने वाली ऐसी घटनाओं के समांतर महिलाओं के लिए घर की चारदिवारी भी कितनी सुरक्षित है, यह सभी जानते हैं। इस मसले पर भी अनेक अध्ययनों में बताया गया है कि महिलाओं और बच्चियों के यौन उत्पीड़न के ज्यादातर मामलों में आरोपी उनका कोई परिचित, यहां तक कि संबंधी भी होता है।

हाल ही में हैदराबाद की घटना के अलावा ऐसी तमाम घटनाओं ने देश भर में लोगों के भीतर आक्रोश पैदा किया है। दूसरी ओर, सरकारें अक्सर यह दावा करती रहती हैं कि कानून-व्यवस्था और सुरक्षित माहौल मुहैया कराने के मोर्चे पर कोई कमी नहीं की जाती है। लेकिन अगर यह दावा सच है तो ऐसा क्यों है कि सौ में नब्बे महिलाओं को लगभग हर वक्त खौफ से गुजरना पड़ता है। सवाल है कि जब पितृसत्तात्मक मानसिकता से लैस पुरुषों का एक बड़ा हिस्सा अपनी यौन कुंठा की वजह से कभी भी यौन हिंसा या उत्पीड़न करने को तैयार रहता है, तो ऐसी स्थिति में महिलाएं खुद को कैसे सुरक्षित महसूस करें? निश्चित रूप से सख्त कानूनी व्यवस्था और समयबद्ध न्यायिक प्रक्रिया ऐसे अपराधों पर लगाम लगाने का एक सबसे जरूरी हिस्सा हैं। लेकिन जब तक सामाजिक विकास नीतियों और उनमें समाज को पितृसत्तात्मक मूल्यों से मुक्ति के सूत्रों को प्रमुखता नहीं दी जाएगी, तब तक स्त्री के लिए अपने आसपास की दुनिया खौफ ही पैदा करेगी।

## कल्पमेधा

अपनी वर्तमान प्रसन्नताओं को इस प्रकार भोगो कि भावी प्रसन्नताओं को क्षति न पहुंचे।

-सेनेका

# अतिक्रमण की भेंट चढ़ते तालाब

दिनेश प्रसाद मिश्र

**हमारी सांस्कृतिक परंपरा में वर्षा जल को संरक्षित करने पर विशेष ध्यान दिया गया था, जिसके लिए जगह-जगह पोखर, तालाब, बावड़ी, कुएं आदि निर्मित कराए जाते थे, जिनमें वर्षा जल एकत्र होता और वह वर्ष भर जीव-जंतुओं सहित मनुष्यों के लिए भी उपलब्ध होता था। पर वैज्ञानिक प्रगति के नाम पर इन्हें संरक्षण न मिलने के कारण अब तक लगभग साढ़े चार हजार नदियां तथा बीस हजार झील, पोखर, तालाब आदि सूख गए हैं।**

आज पूरे देश में पोखर और तालाब संकट में हैं। बहुत सारे तालाब या तो सूख गए हैं या अंतिम सांसें गिन रहे हैं। उत्तर प्रदेश में आगरा के राजपुर गांव में कभी अपार जल राशि रहा करती थी। वह जल आसपास के लोगों तथा जीव-जंतुओं के लिए जीवन अमृत प्रदान करता था, पर नवधनाढ्यों की नजर उस पर ऐसी लगी कि आज उस तालाब के स्थान पर विशाल अट्टालिकाएं खड़ी हैं। बदायूं जिले के अनेक तालाब भू माफिया की भेंट चढ़ चुके हैं। चंदोखर, पक्का तालाब तथा चमरतलैया, जिनका क्षेत्रफल पचास बीघे से भी अधिक था, अपना अस्तित्व गंवा चुके हैं। अब उनके स्थान पर कल्याण नगर, प्रोफेसर कॉलोनी जैसी पाश कॉलोनियां उग आई हैं। पक्का तालाब का संबंध सुरंग के माध्यम से राजा महिपाल के महल से था, जहां स्नान करने के लिए रानियां जाया करती थीं। अब पक्का तालाब का अवशेष मात्र शेष है।

इसी प्रकार कानपुर-आगरा राजमार्ग पर एत्मादपुर से पहले कभी 'बुढ़िया का तालाब' विशाल दरिया के रूप में स्थित था, जिसमें रजवाहे के माध्यम से पानी निरंतर आता रहता था और वह वर्ष पर्यंत लबालब भरा रहता था। अब वहां पर पानी का नामोनिशान नहीं है, बबूल सहित कांटेदार वृक्षों का जंगल खड़ा हो गया है। प्रयागराज स्थित तालाब नवल राय अब इतिहास का विषय बन गया है। उसके स्थान पर आज इस नाम का मोहल्ला कायम है। प्रयागराज में ही धरा गांव का तालाब अपने आप में अद्वितीय था। चालीस एकड़ में फैले इस तालाब की भूमि कंक्रीट की बनाई गई थी और उसमें चारों ओर से आकर बरसाती पानी जमा होता था। वह अड़ोस-पड़ोस के गांवों सहित जीव-जंतुओं के पेयजल के साथ-साथ फसलों की सिंचाई और अन्य आवश्यक कार्यों में उपयोग में लाने पर भी वर्ष पर्यंत लबालब भरा रहता था। पर आज वहां पानी के स्थान पर सूखी भूमि नजर आती है।

गोरखपुर स्थित असुरन पोखरा सन 1075 से 1077 के मध्य राजा शूरपाल ने विष्णु मंदिर के साथ बनवाया था। वह आज पानी रहित होकर असुरन मोहल्ले के नाम से गोरखपुर में जाना जाता है। कानपुर देहात घाटमपुर स्थित कुष्मांडा देवी मंदिर का तालाब भी अपनी यही कहानी कह रहा है। गाजीपुर के सिद्ध पीठ भुड़कुड़ा के उत्तरी छोर पर स्थित पोखरा चमत्कारी पोखरा के नाम से जाना जाता है, जिसे सिद्ध पीठ के दूसरे महान संत गुलाल साहब ने लगभग साढ़े पांच सौ साल पहले खुदवाया था। वह आज अंतिम सांसें गिन रहा है। इसी प्रकार अलीगढ़ से अतरौली स्थित राजमार्ग पुर गांव का तालाब, शाहजहांपुर की तहसील तिलहर और पुवाया की सीमा में लघौला चेना में चौरासी बीघा के विशाल क्षेत्र में फैला तालाब, अमेठी के एक सौ नौ हेक्टेयर में फैला समदा ताल, नोएडा के बिलासपुर में स्थित चालीस बीघा में फैले बूढ़े बाबा का तालाब, बदायूं के अनेक तालाब भू माफियाओं की बुरी नजर का शिकार होकर अपने अस्तित्व को गवां बैठे हैं और उनके पेट में कंक्रीट के जंगल उग कर मुहल्लों के रूप में परिवर्तित हो गए हैं। मुरादाबाद के खुशहालपुर रोड स्थित लोको शेड के पास स्थित तालाब तथा चित्रकूट जिला कलेक्ट्रेट के पास स्थित चंदेल राजाओं द्वारा बनवाए गए मिनी खजुराहो के नाम से विख्यात गणेश बाग स्थित बावड़ी और तालाब आज अंतिम सांसें ले रहे हैं। उनकी सुध लेने वाला कोई नहीं है। कभी समीपवर्ती गांव के सांस्कृतिक, धार्मिक आयोजनों के केंद्र बनने वाले ये तालाब आज मृतप्राय हो गए हैं।

मृतप्राय तालाब-पोखरों की संख्या पूरे देश में बीस हजार से ऊपर पहुंच गई है। उत्तर प्रदेश सरकार के आंकड़ों के अनुसार मेरठ में 1115, बुलंदशहर में 3997, मुजफ्फरनगर में 767, शामली में 348, मुरादाबाद में 2532, अमरोहा में 2101, रामपुर में 2257, संभल में 599, अलीगढ़ में 1848, हाथरस में 94, प्रयागराज में 2800, प्रतापगढ़ में 1378, वाराणसी में 1519, बलिया में 4622, बरेली में 6500, शाहजहांपुर में 5000, बदायूं में 2243, पीलीभीत में 1071, नोएडा में 1002, लखनऊ में 1345, कन्नौज में 1818, चित्रकूट में 1499, फतेहपुर में 6650, कानपुर देहात में 2750, आगरा मंडल में 9423, आजमगढ़ में 45,000, सोनभद्र में 7000, गोरखपुर में 5646 और बस्ती मंडल में 4200 पोखर और तालाब हैं, जिनमें से दस फीसद तालाबों में भी गत जून माह में पानी नहीं था।

प्रदेश सरकार इन तालाबों पर पानी भरवाने का प्रयास कर रही थी। पर मनरेगा के अंतर्गत किए गए प्रयासों के बावजूद जल भरे तालाबों की संख्या कुल

के सापेक्ष बीस फीसद नहीं हो पाई है। वर्षा ऋतु में अवश्य ही इनमें कुछ पानी देखने को मिला, पर उसके जाते ही पानी सूखना प्रारंभ हो गया है। गरमी आते-आते अधिकांश तालाब जल विहीन हो जाएंगे। मनरेगा द्वारा नए-नए तालाब बनाए जा रहे हैं, पर उनका निर्माण बिना किसी योजना के अदूरदर्शिता पूर्ण ढंग से किया जा रहा है। निर्माण के लिए निर्माण तो हो रहा है, पर यह नहीं देखा जा रहा कि इन तालाबों में पानी कहां से आएगा। उनमें प्रायः प्राकृतिक बरसाती पानी नहीं पहुंच पाता, जबकि तालाबों का निर्माण ऐसे स्थान पर होना चाहिए, जहां वर्षा का जल एकत्रित हो और भूगर्भ के जल स्तर को भी बढ़ाए।

आज देश का तीन चौथाई भाग पेयजल की समस्या से जूझ रहा है। देश के अनेक भागों में जल की अनुपलब्धता के कारण आंदोलन और संघर्ष हो रहे हैं। दक्षिण भारत के चेन्नई से लेकर उत्तर भारत के अनेक शहरों में पेयजल की समस्या मुंह बाए खड़ी है। देश के लगभग सत्तर प्रतिशत घरों में शुद्ध पेयजल उपलब्ध नहीं है। लोग प्रदूषित पानी पीने को बाध्य हैं, जिसके चलते लगभग चार करोड़ लोग प्रतिवर्ष प्रदूषित पानी पीने से बीमार होते हैं और लगभग छह करोड़ लोग फ्लोराइड युक्त पानी पीने को विवश हैं। उन्हें पीने के लिए शुद्ध जल उपलब्ध नहीं है। देश में प्रतिवर्ष लगभग चार हजार अरब घन मीटर पानी वर्षा के जल के रूप में प्राप्त होता है, पर उसका लगभग आठ फीसद पानी ही हम संरक्षित कर पाते हैं। बाकी पानी नदियों, नालों के माध्यम से बह कर समुद्र में चला जाता है।

हमारी सांस्कृतिक परंपरा में वर्षा जल को संरक्षित करने पर विशेष ध्यान दिया गया था, जिसके लिए जगह-जगह पोखर, तालाब, बावड़ी, कुएं आदि निर्मित कराए जाते थे, जिनमें वर्षा जल एकत्र होता और वह वर्ष भर जीव-जंतुओं सहित मनुष्यों के लिए भी उपलब्ध होता था। पर वैज्ञानिक प्रगति के नाम पर इन्हें संरक्षण न मिलने के कारण अब तक लगभग साढ़े चार हजार नदियां तथा बीस हजार झील, पोखर, तालाब आदि सूख गए हैं।

देश का कोई भी ऐसा हिस्सा या प्रदेश नहीं है, जहां पोखर और तालाब दिन-प्रतिदिन सूख न रहे हों तथा उन पर भू माफिया और बिल्डरों का अवैध कब्जा न हुआ हो। इसे देखते हुए प्रकृति प्रेमी और जल संरक्षण तथा संवर्धन की दिशा में कार्य कर रहे लोगों द्वारा समय-समय पर ऐसे जल स्रोतों की सुरक्षा के लिए माननीय उच्च न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय में भी गुहार लगाई गई। हिंचलाल तिवारी, जगपाल और अन्य की जनहित याचिका में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा देश के सारे झील-तालाब-झरनों को अतिक्रमण मुक्त करने का आदेश दिया गया था। इसके बाद गाजीपुर के इकबाल अहमद की जनहित याचिका पर उच्च न्यायालय इलाहाबाद ने तालाबों से अतिक्रमण हटाने के लिए 2005-06 में आदेश पारित करते हुए कहा था कि 1952 के पहले के राजस्व अभिलेखों में पोखर, तालाब आदि के रूप में अंकित जलाशयों को अतिक्रमण मुक्त कर उन्हें बहाल किया जाए। माननीय न्यायालयों द्वारा पारित उक्त निर्णयों से समस्या विशेष का तो समाधान हुआ तथा कुछ जलाशयों को जीवनदान मिला पर उनका व्यापक प्रभाव नहीं पड़ा। भू-माफिया, राजनेता और अधिकारियों के गठजोड़ की वजह से जलाशयों की मुक्ति तथा उनकी बहाली की दिशा में ठोस कार्रवाई नहीं की गई।

# भाषा का जीवन

मेधा

**दुनिया मेरे आगे**

भाषा का सवाल बचपन से लेकर अब तक न जाने कितने तरह से मन में उभरता रहा है। एक वजह तो यही समझ में आती है कि व्यक्ति की देह और मन की नाल मां के अलावा अगर किसी और शय से सबसे ज्यादा गहराई से जुड़ी होती है तो वह है अपनी भाषा। बचपन में मां की भाषा में सोना-जागना, हंसना-रोना हुआ और थोड़ी उम्र बढ़ने पर आस-पड़ोस की भाषा भी मां की सिखाई भाषा के ही दायरे में आ गई। कई बार मां की सिखाई भाषा के साथ आ मिली यह पड़ोस की भाषा भी अपनी मातृभाषा बन जाती है। हो सकता है, किन्हीं मामलों में ऐसा न होता हो, लेकिन अक्सर ऐसा ही होता है। तभी तो ज्यादातर भारतीय परिवार अपनी मूल भाषाई बनावट में बहुभाषी होता है।

मिसाल के लिए, मेरी मां के घर पटना में मगही बोली जाती थी। जब वे ब्याह कर गंगा की गोद से निकल बूढ़ी गंडक (नदी) के तट पर आईं तो उनके भाई-बंधु, परिवार-पड़ोस ही नहीं, मायके की भाषा भी छूटी। मायके की भाषा एकदम से छूट गई- ऐसा तो नहीं कह सकते, भाषा व्यक्ति के जीवित होते कभी छूटती नहीं। वह रहती आपके साथ ही है, लेकिन हृदय में रहने और जबान पर होने के बीच का फर्क करना भी जरूरी है। ससुराल के नए संसार में मां की एक नई भाषा से भेंट हुई, महिलाएं बज्जिका बोलती थीं और पुरुष अधिकतर खड़ी बोली हिंदी। चूंकि मेरा शहर मिथिलांचल के ज्यादा करीब है तो वहां मैथिली बोलने वाले भी बहुत लोग थे।

इस तरह मेरा बचपन जिन भाषाओं से समृद्ध हुआ, उनमें हिंदी, बज्जिका, मगही, मैथिली और भोजपुरी थीं। स्कूल में अंग्रेजी तो थी ही। बचपन में ही पिताजी के पुस्तकालय से गालिब और मीर को पढ़ने का चस्का लग गया, सो उर्दू ने भी मेरे भाषा-संसार में अपनी जगह बना ली। दिल्ली आने पर और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में दाखिल होने के बाद सुदूर असम से आई कारबियांग जनजाति की एक छात्रा से दोस्ती हुई। उनकी भाषा कार्बी के बारे में जाना तो उसकी सोंधी महक भी मेरे भाषा संसार को सुगंधित करने लगी। कई बंगाली दोस्तों की संगत का असर कहिए या फिर कवींद्र टैगोर की कविताओं का प्रभाव कि बांग्ला कभी भी दूसरे प्रांत की भाषा नहीं लगी। बांग्ला उतनी ही अपनी लगी, जितनी कि बज्जिका और भोजपुरी। हैदराबाद की एक सहेली ने तेलुगू को कब और कैसे मेरे भाषा-संसार में दाखिल करा दिया दिया, इसका पता तक नहीं चला मुझे। जब शहर पांडिचेरी के इश्क में गिरफ्तार हुई तो एक साथ तमिल और फ्रेंच दिल में समाते चले गए।

इन दिनों जिंदगी का ढर्रा सूफीयत का बन आया है। सो, अमीर खुसरो और मौलाना रूमी फारसी सीखने की ललक पैदा कर रहे हैं। कभी राबिया के लिए धड़कता दिल कहता है- 'ऐ लड़की राबिया को पढ़ने चली हो, लेकिन तुम्हें अरबी क्यों नहीं आती?' बॉलीवुडिया पंजाबी को लेकर मन में जो निरादर था, उसे बुल्लेशाह ने समाप्त कर दिया है। अब हर पंजाबी लफ्ज खुद-ब-खुद अपना अर्थ मुझ पर खोल देता है। तुलसीदास और जायसी को पढ़ते हुए अवधी ने भाषा-संसार को समृद्ध किया तो मीरा की रचनाओं ने राजस्थानी और गुजराती भाषा के संस्कार से अवगत करवाया।

जिंदगी के साथ-साथ भाषा का सफर भी निरंतर जारी रहा। पर कभी भी भाषा को लेकर मन में धर्म का सवाल नहीं उठा। मेरे गांव के इकलौते मुसलिम परिवार के सदस्य हम लोगों से अच्छी बज्जिका और हिंदी बोलते थे। और हमारे उर्दू शब्दों का भंडार उनसे अधिक समृद्ध था। हालांकि भाषाओं के सांप्रदायीकरण की कवायद तो सियासी तौर पर अंग्रेजों ने सन 1800 में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के साथ ही शुरू कर दी थी।

लेकिन आजाद भारत में भाषा को राष्ट्रीय एकता-अखंडता के साए में सोचा गया और अपेक्षा रखी गई कि कोई एक भाषा कालक्रम में सारे देश की भाषा चाहे न बने, तो भी कम से कम इतना तो हो ही जाएगा कि उसे संपर्क-भाषा के रूप में अपनाते हुए किसी को अटपटा न लगे। यों देखें तो भाषा कोई भी हो, वह अपने मिजाज में लोकतांत्रिक ही होती है। हर दूसरी भाषा को अपना कर ही अपना विकास करती है। किसी से शब्द का उपहार लेती है, किसी के व्याकरण से कोई सूत्र ले आती है तो किसी भाषा की भंगिमा अपना लेती है। इस तरह अपने को सजाती-संवारती है। आजाद भारत में हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में विकसित करने का विचार इसी तर्क को अपना कर चला। भाषा धर्म के आधार पर न किसी को पहचानती है और न ही उसे विभेद का जरिया बनाती है। अगर ऐसा होता तो जायसी एक हिंदू राजा की कथा अवधी में क्यों लिखते? संस्कृत या उसके किसी खास हिस्से को सिर्फ हिंदू पढ़ाए वाले तर्क को अगर आगे बढ़ाएंगे तो एक निष्कर्ष यह भी निकलेगा कि जो हिंदू नहीं है, उसे संस्कृत पढ़ने का भी अधिकार नहीं होना चाहिए। हम लौट कर वहीं पहुंचेंगे जहां बात आएगी कि शूद्र, स्त्री को ज्ञान का अधिकार नहीं होना चाहिए!

## गांधी के मूल्य

महात्मा गांधी के हत्यारे नाथूराम गोडसे में दक्षिणपंथ की कट्टर सनक थी, बावजूद इसके संघ या भाजपा ने हाल के वर्षों में गांधी-विरोध या गोडसे का पक्ष नहीं लिया। कारण स्पष्ट है कि गांधी इस देश के जेहन में रचे-बसे हैं। हमारी राजनीति और इसके नुमाइंदों की वैचारिकता चाहे जितनी निकृष्ट हो जाए लेकिन राहत की बात है कि महात्मा गांधी की शहादत के इकहत्तर साल बाद भी, किसी सरकार या किसी पक्ष की इतनी हैसियत नहीं कि राष्ट्रपिता गांधी का खुलेआम विरोध कर उस पर कायम रह जाए। तर्कशील व्यक्ति भी यदि गांधी को भला-बुरा कहे तो आत्मग्लानि का शिकार हो जाता है।

भाजपा भी जानती है कि गांधी का क्षणिक विरोध कर वह एक जमात को अपने पक्ष में तो कर सकती है, लेकिन वह समर्थन अल्पकालिक ही होगा जिसके चलते एक बड़ा जनाधार उससे दूर चला जाएगा। कट्टरता, भेदभाव, नफरत, हिंसा, अतिवाद और द्वेष का जहर कितना ही लोगों के मन में भर दिया जाए, लेकिन अहिंसा, सत्य, भाईचारा, सौहार्द, प्रेम की मानवीय वृत्ति से आमजन स्थायी तौर पर दूर नहीं हो सकता। गांधी इसी मानवता के पर्याय थे, व्यावहारिक और स्वाभाविक थे। आज देश-दुनिया में गांधी के विचार, उनके सिद्धांत, नजरिया, सोच पढ़ाई जाती है। पांच बार शांति के नोबेल के लिए नामित होने वाले महात्मा गांधी को वह पुरस्कार न दिया जाना आज भी नोबेल कमेटी को अखरता है।

बड़ी संजीदगी से असहमति का सम्मान करने और हर भावना व राय को व्यक्त करने के अधिकार के समर्थक गांधी स्वतंत्रता के प्रबल पक्षधर व हर तरह के भेदभाव के घोर विरोधी थे। निर्भीकता से सत्य कहने और उस पर अड़े रहने का साहस गांधी देते हैं। अपने व्यक्तित्व से ही गांधी आजीवन असत्य, घृणा और नफरत को हराते रहे। यही कारण है कि आज गांधी के न होने पर भी झूठ के सहारे उनका प्रतिकार करने की प्रवृत्ति नहीं टिक पा रही है। वे बंदूक की गोली से मरने वाले शख्स हरगिज नहीं थे।

● *कृष्ण जांगिड़, राजस्थान विश्वविद्यालय*

## सुस्ती के पीछे

देश में आर्थिक सुस्ती के कारण किसी से छिपे नहीं हैं। इन कारणों में सबसे चिंताजनक यह तथ्य सामने आना है कि उपभोक्ता खर्च कम हो रहा है। यह कमी शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में हो रही है। इसका मतलब है कि लोग भविष्य को लेकर आशंकित हैं और बचत करना पसंद कर रहे हैं। इससे इनकार नहीं कि बीते दो-तीन महीनों में सरकार एक के बाद एक करीब दो दर्जन कदम उठा चुकी है। इनमें कुछ कदम ऐसे रहे जिन्हें क्रांतिकारी कहा गया, जैसे कॉरपोरेट कर की दरों में व्यापक कटौती। इस कटौती से कॉरपोरेट जगत को प्रोत्साहन तो मिला है, लेकिन इस तथ्य को ओझल नहीं कर सकते कि अर्थव्यवस्था को गति देने के लिए जो भी कदम उठाए गए हैं, वे आपूर्ति बढ़ाने वाले हैं। लिहाजा, सरकार को कुछ ऐसे उपाय भी करने चाहिए जिनसे मांग बढ़े। यह तभी होगा जब उपभोक्ता अपना खर्च बढ़ाएंगे। उचित होगा कि कॉरपोरेट कर में कटौती के बाद व्यक्तिगत आयकर दरों में कटौती करने के साथ अन्य वे उपाय किए जाएं, जिनसे लोग खपत बढ़ाने को प्रेरित हों।

● *हेमंत कुमार, गोराडीह, भागलपुर*

## सुधार की दरकार

भारत एक कृषिप्रधान अर्थव्यवस्था वाला देश है। विकासशील देश होने के साथ ही जनसंख्या विस्फोट की स्थिति ने भारत में गरीबी और भुखमरी जैसी समस्याओं को और अधिक भयावह बना दिया है। ऐसी हालत में संसाधनों के अधिकतम और कुशलतम उपयोग की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि भूमि और उसकी उत्पादकता पर ध्यान देने के साथ ही शहरी क्षेत्रों में भी भूमि के प्रासंगिक प्रयोग की दरकार है। इसके अलावा सरकार को जल प्रबंधन नीतियों पर पुनर्विचार करने की जरूरत है। लगभग तेईस करोड़ लोगों की बिजली तक पहुंच नहीं है, जिसे देखते हुए भारत में आधारभूत संरचना में सुधार की तत्काल आवश्यकता है।

● *गुरुदास दुबे, मऊगंज, मध्यप्रदेश*

## यह मिसाल

सुप्रीम कोर्ट के पूर्व मुख्य न्यायाधीश रंजन गोगोई ने सेवानिवृत्ति के दो दिन बाद ही सरकारी बंगला खाली कर दिया। वे गुवाहाटी स्थित अपने घर लौट चुके हैं। खबर छोटी है लेकिन महत्त्वपूर्ण है। किसी व्यक्ति के सेवानिवृत्त होने के बाद गृह नगर लौटने में नया कुछ नहीं होता। लोग सेवानिवृत्ति के बाद अक्सर अपने गृहनगर प्रदेश लौट जाते हैं। जस्टिस गोगोई से संबंधित खबर में बंगले वाला पक्ष अवश्य मजबूत है। उन्होंने अनुकरणीय उदाहरण पेश कर एक आदर्श परंपरा को मजबूती से आगे बढ़ाया है। ऐसे उदाहरण प्रेरणास्पद हैं।

इस तरह के उदाहरणों की अपेक्षा राजनीति और सरकारी सेवा में जुड़े लोगों से बरसों से की जा रही है। पलट कर पीछे देखने पर बहुत उत्साहजनक दृश्य दिखाई नहीं देता। हाल में राजनीतिक बिरादरी में महज दो ऐसे बड़े उदाहरण मिले। लोगों को याद होगा कि केंद्र सरकार में वित्तमंत्री रहे अरुण जेटली और विदेश मंत्री रहीं सुषमा स्वराज ने पद से हटते ही अपने सरकारी बंगले खाली कर दिए थे। जेटली वरिष्ठ राज्यसभा सदस्य होने के कारण बंगले में रह सकते थे लेकिन उन्होंने ऐसा करना उचित नहीं समझा। विडंबना है कि कभी उच्च मूल्यों और प्रबल नैतिकता के लिए पहचाने जाते रहे हमारे समाज और परिवारों में अब इनकी कमी साफ दिखाई देती है। सैकड़ों उदाहरण भरे पड़े हैं। लोगों को सरकारी आवासों में अवैध रूप से रहते देखा जाता है। बाहर निकालने की बात शुरू होते ही नाना प्रकार के बहाने और तर्कों की झड़ी लग जाती है। कितने ही मामलों में अदालती हस्तक्षेप से ऐसे लोगों को बाहर निकाला जा सका। इनमें राजनेता, पूर्व जनप्रतिनिधि और सेवानिवृत्त अधिकारी बहुतायत में रहे। अगस्त 2019 में लोकसभा की आवास समिति ने 200 पूर्व संसद सदस्यों को नोटिस जारी कर सरकारी बंगले को खाली करने को कहा था। ये सारे माननीय पिछली लोकसभा के सदस्य थे, जिसे पच्चीस मई को भंग किया जा चुका था। नियमानुसार इन्हें एक माह में बंगले खाली कर देने थे। नोटिस पर एक बड़े कांग्रेसी नेताके बयान पर आश्चर्य हुआ।

● *रितेश कुमार उपाध्याय, संत कबीर नगर*

**चौपाल**

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com



www.readwhere.com